बाइबल पर आधारित निर्णय लेना

अध्याय आठ

अस्तित्व-संबंधी दृष्टिकोण : अच्छा होना

Manuscript

thirdmill
Biblical Education. For the World. For Free.

© थर्ड मिलेनियम मिनिस्ट्रीज़ 2012 के द्वारा

सर्वाधिकार सुरक्षित। इस प्रकाशन के किसी भी भाग को प्रकाशक, थर्ड मिलेनियम मिनिस्ट्रीज़, इनकोरपोरेशन, 316, लाइव ओक्स बुलेवार्ड, कैसलबरी, फ्लोरिडा 32707 की लिखित अनुमति के बिना समीक्षा, टिप्पणी, या अध्ययन के उद्देश्यों के लिए संक्षिप्त उद्धरणों के अतिरिक्त किसी भी रूप में या किसी भी तरह के लाभ के लिए पुनः प्रकशित नहीं किया जा सकता।

पवित्रशास्त्र के सभी उद्धरण बाइबल सोसाइटी ऑफ़ इंडिया की हिन्दी की पवित्र बाइबल से लिए गए हैं। सर्वाधिकार © The Bible Society of India

थर्ड मिलेनियम मिनिस्ट्रीज़ की सेवकाई के विषय में

1997 में स्थापित, थर्ड मिलेनियम मिनिस्ट्रीज़ एक लाभनिरपेक्ष सुसमाचारिक मसीही सेवकाई है जो पूरे संसार के लिए मुफ्त में बाइबल आधारित शिक्षा प्रदान करने के लिए प्रतिबद्ध है।

संसार के लिए मुफ़्त में बाइबल आधारित शिक्षा।

हमारा लक्ष्य संसार भर के हज़ारों पासवानों और मसीही अगुवों को मुफ़्त में मसीही शिक्षा प्रदान करना है जिन्हें सेवकाई के लिए पर्याप्त प्रशिक्षण प्राप्त नहीं हुआ है। हम इस लक्ष्य को अंग्रेजी, अरबी, मनडारिन, रूसी, और स्पैनिश भाषाओं में अद्वितीय मल्टीमीडिया सेमिनारी पाठ्यक्रम की रचना करने और उन्हें विश्व भर में वितरित करने के द्वारा पूरा कर रहे हैं। हमारे पाठयक्रम का अनुवाद सहभागी सेवकाइयों के द्वारा दर्जन भर से अधिक अन्य भाषाओं में भी किया जा रहा है। पाठ्यक्रम में ग्राफिक वीडियोस, लिखित निर्देश, और इंटरनेट संसाधन पाए जाते हैं। इसकी रचना ऐसे की गई है कि इसका प्रयोग ऑनलाइन और सामुदायिक अध्ययन दोनों संदर्भों में स्कूलों, समूहों, और व्यक्तिगत रूपों में किया जा सकता है।

वर्षों के प्रयासों से हमने अच्छी विषय-वस्तु और गुणवत्ता से परिपूर्ण पुरस्कार-प्राप्त मल्टीमीडिया अध्ययनों की रचना करने की बहुत ही किफ़ायती विधि को विकसित किया है। हमारे लेखक और संपादक धर्मवैज्ञानिक रूप से प्रशिक्षित शिक्षक हैं, हमारे अनुवादक धर्मवैज्ञानिक रूप से दक्ष हैं और लक्ष्य-भाषाओं के मातृभाषी हैं, और हमारे अध्यायों में संसार भर के सैकड़ों सम्मानित सेमिनारी प्रोफ़ेसरों और पासवानों के गहन विचार शामिल हैं। इसके अतिरिक्त हमारे ग्राफिक डिजाइनर, चित्रकार, और प्रोडयूसर्स अत्याधुनिक उपकरणों और तकनीकों का प्रयोग करने के द्वारा उत्पादन के उच्चतम स्तरों का पालन करते हैं।

अपने वितरण के लक्ष्यों को पूरा करने के लिए थर्ड मिलेनियम ने कलीसियाओं, सेमिनारियों, बाइबल स्कूलों, मिशनरियों, मसीही प्रसारकों, सेटलाइट टेलीविजन प्रदाताओं, और अन्य संगठनों के साथ रणनीतिक सहभागिताएँ स्थापित की हैं। इन संबंधों के फलस्वरूप स्थानीय अगुवों, पासवानों, और सेमिनारी विद्यार्थियों तक अनेक विडिओ अध्ययनों को पहुँचाया जा चुका है। हमारी वेबसाइट भी वितरण के माध्यम के रूप में कार्य करती है और हमारे अध्यायों के अतिरिक्त सामग्रियों को भी प्रदान करती है, जिसमें ऐसे निर्देश भी शामिल हैं कि अपने शिक्षण समुदाय को कैसे आरंभ किया जाए।

थर्ड मिलेनियम मिनिस्ट्रीज a 501(c)(3) कारपोरेशन के रूप में IRS के द्वारा मान्यता प्राप्त है। हम आर्थिक रूप से कलीसियाओं के टैक्स-डीडक्टीबल योगदानों, संस्थानों, व्यापारों और लोगों पर आधारित हैं। हमारी सेवकाई के बारे में अधिक जानकारी के लिए और यह जानने के लिए कि आप किस प्रकार इसमें सहभागी हो सकते हैं, कृपया हमारी वैबसाइट http://thirdmill.org को देखें।

विषय-वस्तु

परिचय....1
सृष्टि....2
  परमेश्वर....2
    अस्तित्व....2
    अच्छाई....3
  मनुष्यजाति....4
    स्वरूप....5
    आशीष....6
    सांस्कृतिक आदेश....6
पतन....7
  स्वभाव....8
  इच्छा....8
  ज्ञान....11
    प्रकाशन के प्रति पहुँच....11
    प्रकाशन की समझ....12
    प्रकाशन के प्रति आज्ञाकारिता....13
छुटकारा....15
  स्वभाव....16
  इच्छा....16
  ज्ञान....18
    प्रकाशन के प्रति हमारी पहुँच....18
    प्रकाशन की समझ....18
    प्रकाशन के प्रति आज्ञाकारिता....19
निष्कर्ष....21

चलचित्र, अध्ययन मार्गदर्शिका एवं कई अन्य संसाधनों के लिये, हमारी वेबसाइट thirdmill.org पर जाएँ।

बाइबल पर आधारित निर्णय लेना

अध्याय आठ

अस्तित्व-संबंधी दृष्टिकोण : अच्छा होना

परिचय

मध्य युगों के दौरानए दर्शनशास्त्री और वैज्ञानिक कभी.कभी रसायनविद्या नाम के एक कार्य में शामिल होते थे। यह सीसे जैसे एक सस्ती धातू को सोने जैसी महंगी वस्तु में बदलने का प्रयास था। निसंदेह रसायनशास्त्री जानते थे कि सीसे को सोने जैसा दिखाया जा सकता था या फिर किसी वस्तु के साथ मिलाया जा सकता था जिससे कि वह सोने जैसा दिखे। परन्तु वे यह भी जानते थे कि सीसे में सोने के सही गुण डालने के लिए उसके मूलभूत चरित्र को बदलने की जरुरत है। उससे वास्तव में सोना बनना पड़ेगा।

लोगों के साथ भी ऐसा ही होता है। हमारे शब्द, हमारे विचार और कार्य हमारे मूलभूत चरित्र से संबंधित होते हैं। अतः जिस प्रकार सीसे में सोने के गुण नहीं हो सकते, वैसे ही भ्रष्ट चरित्र के लोग भले कार्य नहीं कर सकते। हमारे कार्य सदैव हमारे अस्तित्व को दर्शाते हैं।

यह हमारी श्रृंखला बाइबल पर आधारित निर्णय लेना का आठवां अध्याय हैए और हमने इसका शीर्षक दिया हैए "अस्तित्व-संबंधी दृष्टिकोणः अच्छा होना"। अच्छा होना के इस अध्याय में हम इस बात पर ध्यान देते हुए कि किस प्रकार भलाई अस्तित्व से संबंधित है एवं भलाई और हमारे अस्तित्व के बीच संबंध को देखते हुए अस्तित्व संबंधी दृष्टिकोण की हमारी खोज को आरंभ करेंगे।

जैसा कि आप याद करेंगे कि इन अध्यायों में बाइबल पर आधारित निर्णय लेने का हमारा नमूना यह रहा है कि नैतिक निर्णय लेने में एक व्यक्ति किसी विशेष परिस्थिति के प्रति परमेश्वर के वचन को लागू करता है। हर नैतिक प्रश्न तीन मूलभूत पहलुओं पर बल देता है, अर्थात, परमेश्वर का वचन, परिस्थिति, और निर्णय लेने वाला व्यक्ति।

नैतिक निर्णय के ये तीन पहलू उन तीन दृष्टिकोणों को दर्शाते हैं जो हमने इन सारे अध्यायों में नैतिक विषयों के प्रति लिए हैं। निर्देशात्मक दृष्टिकोण परमेश्वर के वचन पर बल देता है और ऐसे प्रश्न पूछता है- परमेश्वर के निर्देश हमारे कर्तव्यों के बारे में क्या दर्शाते हैं? परिस्थिति-संबंधी दृष्टिकोण नैतिक शिक्षा में वास्तविकताओं, लक्ष्यों, और साधनों पर ध्यान देता है कि कैसे हम उन लक्ष्यों तक पहुँच सकते हैं जो परमेश्वर को प्रसन्न करें? अस्तित्व-संबंधी दृष्टिकोण मनुष्य पर केन्द्रित होता है, अर्थात वे लोग जो नैतिक निर्णय लेते हैं। यह हमारे सामने ऐसे प्रश्न रखता है, जैसे कि परमेश्वर को प्रसन्न करने के लिए हमें किस प्रकार से बदलना चाहिए? और किस प्रकार के लोग उसे प्रसन्न करते हैं? यह वह अस्तित्व-संबंधी दृष्टिकोण है जिसके बारे में हम इस श्रृंखला के अगले अध्यायों में बात करते रहेंगे।

जैसा कि हमने पिछले अध्यायों में उल्लेख किया, अस्तित्व-संबंधी शब्द को विभिन्न दार्शनिकों द्वारा विभिन्न रूपों में इस्तेमाल किया गया है। परन्तु इन अध्यायों में हम इस शब्द का प्रयोग नैतिक प्रश्नों के मानवीय पहलुओं को दर्शाने में करेंगे। अतः अस्तित्व-संबंधी दृष्टिकोण के शीर्षक तले हम हमारे चरित्र, हमारे स्वभाव, हम कैसे लोग हैं और हमें कैसे लोग बनना चाहिए जैसे विषयों पर ध्यान देंगें।

खासकर इस अध्याय में, हम इस बात पर चर्चा करेंगे कि एक व्यक्ति के लिए अच्छा या भला होने का अर्थ क्या है। हम सब जानते हैं कि कभी-कभी बुरे से बुरे अपराधी भी ऐसे कार्य करते हैं जो अच्छे होते हैं। परन्तु एक अच्छा व्यक्ति होना एक दूसरी बात है। अच्छा होना हमारी पहचानों, समर्पणों, और उत्साहों से जुड़ा होता होता है- अर्थात् वे बातें जिसे बाइबल व्यक्ति के हृदय के रूप में बताती है।

चलचित्र, अध्ययन मार्गदर्शिका एवं कई अन्य संसाधनों के लिये, हमारी वेबसाइट thirdmill.org पर जाएँ।

"अच्छा होना" के इस अध्याय में हम बाइबलीय इतिहास के तीन मूलभूत चरणों के रूप में अस्तित्व और अच्छाई के बीच के संबंध को ढूंढेंगे। पहला, हम परमेश्वर की अच्छाई पर ध्यान देते हुए और फिर इस बात पर ध्यान देते हुए कि मनुष्य अच्छा था जब परमेश्वर ने पहले बनाया था, सृष्टि के समय की चर्चा करेंगे। दूसरा, इस बात पर ध्यान देते हुए कि पाप ने किस प्रकार मनुष्य की अच्छाई को नुकसान पहुँचाया, हम पतन के समय की ओर मुड़ेंगे। और तीसरा, हम छुटकारे के बारे में बात करेंगे, जब परमेश्वर उन लोगो को पुनर्स्थापित करता है जो उसके प्रति विश्वासयोग्य होते हैं और अच्छाई के लिए उन्हें सामर्थ देता है। आइए, सृष्टि के साथ आरंभ करें, वह समय जब उस अच्छे सृष्टिकर्ता को भाया कि वह एक अच्छे संसार को बनाये और उसमें अच्छे लोगों को रखे।

सृष्टि

सृष्टि के समय में अच्छाई पर हमारी चर्चा दो भागों में विभाजित होगी। पहला, हम परमेश्वर और उसकी अच्छाई के बारे में बात करेंगे और इसमें इस वास्तविकता को स्पष्ट करेंगे कि सारी सच्ची नैतिक अच्छाई स्वयं परमेश्वर में पाई जाती है। और दूसरा, हम वर्णन करेंगे कि किस प्रकार परमेश्वर ने अपनी अच्छाई को दर्शाने के लिए मनुष्यजाति को बनाया था। अतः इस बिंदु पर परमेश्वर की अपनी अच्छाई को देखें।

परमेश्वर

जब हम इस बात को खोजते हैं कि अच्छाई परमेश्वर में पाई जाती है, तो हम परमेश्वर के अस्तित्व, विशेषकर उसके चरित्र पर ध्यान देते हुए आरंभ करेंगे। और फिर, हम उसके चरित्र के एक विशेष पहलु पर ध्यान देंगें, अर्थात् उसकी नैतिक अच्छाई। हम परमेश्वर के अस्तित्व की संक्षिप्त चर्चा के साथ आरंभ करेंगे।

अस्तित्व

ऐसी अनेक बातें हैं जो पवित्रशास्त्र परमेश्वर के बारे में कहता है, परन्तु हमारे उद्देश्य के लिए हम उसकी मुख्य विशेषताओं और उसके व्यक्तित्व के बीच संबंध पर ध्यान देंगें। सरल रूप में कहें तो, परमेश्वर की विशेषताएं उसके व्यक्तित्व से अभिन्न हैं; वे परिभाषित करती हैं कि वह कौन है।

यही एक कारण है कि पवित्रशास्त्र के लेखक उसकी विशेषताओं के अनुसार ही उसका सामान्यतः वर्णन करते हैं और उसका नाम रखते हैं। उदाहरण के तौर पर, 2 कुरिन्थियों 1:3 में उसे "करुणा का पिता" और "सब प्रकार की शांति का परमेश्वर" कहा जाता है। वह यहेजकेल 10:5 में "सर्वशक्तिमान परमेश्वर," मलाकी 2:17 में "न्यायी परमेश्वर," और इब्रानियों 13:20 में "शांतिदाता परमेश्वर" है। वह नीतिवचन 9:10 में "परम पवित्र" और भजन संहिता 24:7-10 में "प्रतापी राजा" है।

यह सूची और आगे बढ़ सकती थी, परन्तु महत्वपूर्ण बात यह है: इस रूप में परमेश्वर की विशेषताओं को पहचानने से पवित्रशास्त्र के लेखक हमें परमेश्वर के बारे में एक व्यक्तित्व के रूप में सिखा रहे थे; वे उसके आधारभूत चरित्र का वर्णन कर रहे थे। उदाहरण के तौर पर, जब दाऊद ने भजन 24 में यहोवा को "प्रतापी राजा" कहा, तो उसका अर्थ केवल यह नहीं था कि परमेश्वर में कुछ महिमा है और वह कभी-कभी प्रतापी है।

बल्कि उसका अर्थ था कि परमेश्वर की महिमा उसके चरित्र का महत्वपूर्ण पहलु था, जो उसके व्यक्तित्व से अभिन्न है और उसके अस्तित्व का मुख्य भाग है।

जब हम परमेश्वर के चरित्र पर चर्चा करते हैं तो यह याद रखना महत्वपूर्ण है कि परमेश्वर की सभी विशेषताएं अपरिवर्तनीय हैं, अर्थात् वे कभी बदल नहीं सकती। उदाहरण के तौर पर, परमेश्वर एक दिन पवित्र किसी दूसरे दिन अपवित्र नहीं हो सकता। वह किसी एक समय सर्वशक्तिमान और सर्वज्ञानी होकर किसी दूसरे दिन अपनी सामर्थ और ज्ञान में सीमित नहीं हो सकता।

पवित्रशास्त्र हमें यह कई स्थानों पर सिखाता है, जैसे भजन 102:25-27, मलाकी 3:6, और याकूब 1:17। परन्तु समय की बचत के लिए आइये इनमें से एक ही देखें। याकूब 1:17 में याकूब के शब्दों को सुनें:

> ज्योतियों के पिता... में न तो कोई परिवर्तन हो सकता है, ओर न अदल बदल के कारण उस पर छाया पड़ती है। (याकूब 1:17)

सृष्टि के समय हुए सारे परिवर्तनों और बदलावों के बावजूद हम आश्वस्त हो सकते हैं कि परमेश्वर जो है उससे बदलता नहीं है। आज भी परमेश्वर उन सारी विशेषताओं के साथ वही व्यक्तित्व है जो वह संसार की रचना से पहले था। वह सदैव एकसा रहेगा।

परमेश्वर के अस्तित्व के बारे में बात करने के बाद हम उस अच्छाई की ओर मुड़ने के लिए तैयार हैं जो परमेश्वर में है।

अच्छाई

जब हम नैतिक शिक्षा के सन्दर्भ में परमेश्वर की अच्छाई के बारे में बात करते हैं तो हमारे मन में उसकी नैतिक शुद्धता और सिद्धता होती है। जैसा कि हमने पिछले अध्यायों में देखा था कि परमेश्वर स्वयं नैतिकता का परम स्तर है। अच्छाई का कोई बाहरी स्तर नहीं है जिसके द्वारा उसका या हमारा न्याय किया जा सके। बल्कि, जो कुछ भी उसके चरित्र के सदृश्य होता है वह अच्छा होता है, और जो कुछ भी उसके चरित्र के सदृश्य नहीं होता वह बुरा होता है।

1 यूहन्ना 1:5-7 “ज्योति” के सन्दर्भ में इस विचार को स्पष्ट करता है। वहां यूहन्ना ने इन शब्दों को लिखा:

> परमेश्वर ज्योति है। और उस में कुछ भी अन्धकार नहीं: यदि हम कहें, कि उसके साथ हमारी सहभागिता है, और फिर अन्धकार में चलें, तो हम झूठे हैं:और सत्य पर नहीं चलते। पर यदि जैसा वह ज्योति में है, वैसे ही हम भी ज्योति में चलें, तो एक दूसरे से सहभागिता रखते हैं; और उसके पुत्र यीशु का लहू हमें सब पापों से शुद्ध करता है। (1 यूहन्ना 1:5-7)

इस अनुच्छेद में ज्योति सत्य और नैतिक शुद्धता की उपमा है, वहीं अन्धकार को पाप और झूठ के साथ जोड़ा जाता है। अतः क्योंकि परमेश्वर में अन्धकार नहीं है इसलिए वह अपने सारे अस्तित्व के हर पहलू में सिद्ध रूप से पाप से मुक्त है। दूसरे शब्दों में, अच्छाई परमेश्वर की एक मूलभूत विशेषता है।

अब जब हम परमेश्वर के अस्तित्व के संबंध में उसकी अच्छाई के बारे में सोचते हैं, तो यह एक बार फिर से दृष्टिकोणों के रूप में सोचने में सहायता करता है। आपको याद होगा कि इस श्रृंखला में कई बार हमने दृष्टिकोणों के महत्व के बारे में बात की है। उदाहरण के तौर पर हमारे नमूने में तीन प्रकार के दृष्टिकोण पाए

चलचित्र, अध्ययन मार्गदर्शिका एवं कई अन्य संसाधनों के लिये, हमारी वेबसाइट thirdmill.org पर जाएँ।

जाते हैं: निर्देशात्मक दृष्टिकोण, परिस्थिति-संबंधी दृष्टिकोण, और अस्तित्व-संबंधी दृष्टिकोण। और प्रत्येक दृष्टिकोण सम्पूर्ण हमें नैतिक शिक्षा को एक अलग नज़रिए से दिखाता है।

परमेश्वर की विशेषताओं के बारे में भी ऐसी ही बात लागू होती है। परन्तु क्योंकि परमेश्वर में बहुत सारी विशेषताएं हैं, इसलिए उनके बारे में त्रिभुज की अपेक्षा रत्न के रूप में सोचना ज्यादा सहायक होता है।

सरल रूप में कहें तो परमेश्वर की सभी विशेषताएं उसके सम्पूर्ण अस्तित्व का दृष्टिकोण है। परमेश्वर की प्रत्येक विशेषता दूसरी विशेषताओं पर निर्भर होती है और उनके द्वारा महत्वपूर्ण बनाई जाती हैं।

उदाहरण के तौर पर, परमेश्वर की केवल तीन विशेषताओं पर ध्यान दें: अधिकार, न्याय, और अच्छाई। परमेश्वर का अधिकार अच्छा और न्यायी है। अर्थात्, यह अच्छा और न्यायी है कि परमेश्वर में यह अधिकार पाया जाता है और वह अच्छे एवं न्यायी रूपों में अपने अधिकार का उपयोग करता है। इसी प्रकार, उसका न्याय आधिकारिक और अच्छा है। जब परमेश्वर न्याय करता है तो वह सदैव आधिकारिक और न्यायी होता है। और इसी प्रकार उसकी अच्छाई आधिकारिक और न्यायी है। उसकी अच्छाई न्याय को बढाती है और उनको आशीषित करती है जो न्याय-पसंद होते हैं, और यह ऐसे आधिकारिक स्तर को स्थापित करती है जिसके द्वारा सारी अच्छाई को जांचा जाता है।

पारम्परिक रूप से, धर्मवैज्ञानिकों ने परमेश्वर की सादगी के शीर्षक तले परमेश्वर की विशेषताओं के अंतर-संबंध के बारे में बात की है। इस शब्द से धर्मवैज्ञानिकों का अर्थ था कि परमेश्वर भिन्न असंबंधित भागों का कोई संकलन नहीं है, बल्कि परम सम्पूर्णता का एकीय अस्तित्व है। या हमारे रत्न के उदाहरण का प्रयोग करें तो वह कोई गहना नहीं है जिसमें कि कई रत्न हों, बल्कि एक रत्न है जिसके कई पक्ष हैं।

इस वास्तविकता को समझना महत्वपूर्ण है क्योंकि इसका अर्थ है कि परमेश्वर के अस्तित्व में ऐसा कुछ भी नहीं है जो उसकी अच्छाई का विरोधी हो या हमारे लिए एक विरोधी स्तर दे। उदाहरण के तौर पर, हम कभी भी उसकी अच्छाई की बातों का विरोध करने के लिए परमेश्वर के न्याय की अपील नहीं कर सकते। परमेश्वर के चरित्र में यदि कुछ न्याय-संगत है तो वह अच्छा भी है। और यदि यह अच्छा है तो यह आवश्यक रूप से न्यायी भी है। उसकी विशेषताएं हमेशा एक-दूसरे से सहमत होती हैं क्योंकि वे सदैव समान समरूपी, एक्य व्यक्तित्व का वर्णन करती हैं।

यह देखने के बाद कि सारी सच्ची नैतिक भलाई परमेश्वर के अस्तित्व पर आधारित है, अब हम इस वास्तविकता पर ध्यान देने के लिए तैयार हैं कि परमेश्वर ने मनुष्य को अच्छा बनाया था। अर्थात्, उसने अपनी व्यक्तिगत भलाई को प्रकट करने के लिए हमारी रचना की थी।

मनुष्यजाति

उत्पत्ति अध्याय 1 में सृष्टि के वर्णन से सब मसीही परिचित हैं। हम सब जानते हैं कि परमेश्वर ने स्वर्ग और पृथ्वी की रचना की, और उसे आकार देने के लिए ढाला। और हम जानते हैं कि उसने उसमे निवासियों को भी रखा कि वह खाली न रहे। और निसंदेह, सृष्टि के सप्ताह की सबसे श्रेष्ठ कृति छठे दिन मनुष्यजाति की रचना थी। उत्पत्ति 1:27-28 को सुनें जहाँ मूसा ने इन शब्दों को लिखा:

> तब परमेश्वर ने मनुष्य को अपने स्वरूप के अनुसार उत्पन्न किया,... और परमेश्वर ने उन को (मनुष्यजाति) आशीष दी: और उन से कहा, फूलो-फलो, और पृथ्वी में भर जाओ, और उसको अपने वश में कर लो; और समुद्र की मछलियों, तथा आकाश के पक्षियों, और पृथ्वी पर रेंगने वाले सब जन्तुओ पर अधिकार रखो। (उत्पत्ति 1:27-28)

चलचित्र, अध्ययन मार्गदर्शिका एवं कई अन्य संसाधनों के लिये, हमारी वेबसाइट thirdmill.org पर जाएँ।

मनुष्यजाति की अच्छाई के बारे में हमारी चर्चा पढ़े गए इन पदों में पाए जाने वाले मनुष्य की सृष्टि के तीन वर्णनों पर ध्यान देगी। पहला, हम इस वास्तविकता पर ध्यान देंगे कि मनुष्यजाति को परमेश्वर के स्वरूप में बनाया गया, अर्थात् परमेश्वर का दृष्टिगोचर प्रतिनिधित्व जो उसकी अच्छाई को दर्शाता हो। दूसरा, हम मनुष्यजाति पर परमेश्वर की आशीष के बारे में बात करेंगे। और तीसरा, हम उस सांस्कृतिक आदेश का उल्लेख करेंगे जो परमेश्वर ने मनुष्यजाति को दिया है। आइये, सृष्टि के समय मनुष्यजाति द्वारा लिए गए परमेश्वर के स्वरूप के साथ आरंभ करें।

स्वरूप

जैसा कि उत्पत्ति 1:27 में मूसा ने लिखा था:

> परमेश्वर ने मनुष्य को अपने स्वरूप के अनुसार उत्पन्न किया। (उत्पत्ति 1:27)

अब, जब धर्मवैज्ञानिक परमेश्वर के स्वरूप के रूप में मनुष्यजाति के बारे में बात करते हैं तो वे प्रायः विवेक, आत्मिकता, नैतिक प्रकृति, अनैतिकता और हमारी मूल धार्मिकता जैसी विशेषताओं के बारे में बात करते हैं।

परन्तु परमेश्वर के स्वरूप को समझने का शायद एक सर्वोत्तम तरीका यह देखना है कि किस प्रकार प्राचीन संसार स्वरूपों को समझता था। उत्पत्ति के लिखे जाने के समय राजाओं के लिए ये एक आम बात थी कि वे अपने राज्यों में अपनी मूर्तियों और तस्वीरों को लगाते थे। इन मूर्तियों को बहुत सम्मान दिया जाता था क्योंकि वे राजाओं के प्रतिनिधि थे। वे लोगों को उससे प्रेम करने, उसका सम्मान करने और उसकी आज्ञा मानने की याद दिलाते थे।

इसी प्रकार, सारी सृष्टि में महान राजा परमेश्वर ने मनुष्यजाति को अपनी जीवित तस्वीरों अर्थात् स्वरूपों के रूप में स्थापित किया। अतः जब हम एक मनुष्य को देखते हैं तो हम उस स्वरूप को देखते हैं जो हमें परमेश्वर की याद दिलाता है। और जब हम गलत रूप से मनुष्यों का असम्मान करते हैं तो हम उस परमेश्वर का असम्मान करते हैं जिसका स्वरूप वे हैं। उदाहरण के लिए उत्पत्ति 9:6 पर ध्यान दें जहाँ परमेश्वर ने यह निर्देश दिया:

> जो कोई मनुष्य का लहू बहाएगा उसका लहू मनुष्य ही से बहाया जाएगा क्योंकि परमेश्वर ने मनुष्य को अपने ही स्वरूप के अनुसार बनाया है। (उत्पत्ति 9:6)

वह कारण जिसके लिए हत्यारों को मृत्यु की सजा दी जाती थी वह सिर्फ इसलिए नहीं थी कि उन्होंने मनुष्य की जान ली थी, परन्तु इसलिए कि उन्होंने परमेश्वर के स्वरूप पर आक्रमण किया था, उन्होंने महान राज के सम्मान के विरुद्ध आक्रमण किया था।

इससे बढ़कर, प्राचीन संसार ने दैवीय स्वरूपों को दैवीय पुत्रत्व से भी जोड़ा। विशेष तौर पर, प्राचीन राजाओं को देवताओं के स्वरूपों और देवताओं के पुत्रों के रूप में भी सोचा जाता था। अतः उत्पत्ति में जब परमेश्वर ने नर और नारी को अपने स्वरूप में बनाया तो उसने मनुष्यजाति को अपने शाही बच्चों के रूप में घोषित किया।

वास्तव में, परमेश्वर के प्रतिनिधि और उसकी संतान होने के नाते यह मनुष्यजाति की भूमिका है जो उन अनेक निष्कर्षों के आधार की रचना करते हैं जो हम हमारी अच्छाई से निकालते हैं। क्योंकि परमेश्वर चाहता था कि हम उसके प्रतिनिधि और उसकी संतान बनें, उसने हमें ऐसी विशेषताओं के साथ रचा जो उसकी सिद्धताओं को दर्शाती थीं। निसंदेह, मनुष्यजाति बिलकुल परमेश्वर जैसी नहीं थी कि वह हर रूप में पूरी तरह से

चलचित्र, अध्ययन मार्गदर्शिका एवं कई अन्य संसाधनों के लिये, हमारी वेबसाइट thirdmill.org पर जाएँ।

सिद्ध हो। परन्तु हमें बिना त्रुटि और बिना पाप के, बल्कि परमेश्वर के चरित्र के स्तर के समान रचा गया था। इस रूप में, परमेश्वर ने मनुष्यजाति को हमारे अस्तित्व में हमारी अपनी अच्छाई की विशेषता के साथ स्थापित किया।

आशीष

परमेश्वर के स्वरूप के रूप में मनुष्यजाति की सृष्टि के इस नजरिये की पुष्टि इस वास्तविकता से होती है कि परमेश्वर ने मनुष्य को आशीष दी। उत्पत्ति 1:28 में यह वाक्यांश एक महत्वपूर्ण घटना को दर्शाता है जो मनुष्यजाति की सृष्टि के समय हुई। जैसा कि हम वहां पढ़ते हैं:

> परमेश्वर ने उन को आशीष दी। (उत्पत्ति 1:28)

आपको याद होगा कि इस सारी श्रृंखला में हमनें मसीही नैतिक शिक्षा को इस प्रकार परिभाषित किया है:

> वह धर्मविज्ञान जिसे निर्धारित करने के उन साधनों के रूप में देखा जाता है कि कौनसे मनुष्य, कार्य और स्वभाव परमेश्वर की आशीषों को प्राप्त करते हैं और कौनसे नहीं।

इस परिभाषा से हमने “अच्छे” को न केवल परमेश्वर के चरित्र के रूप में बल्कि उस रूप में भी परिभाषित किया है जिसे वह आशीष देता है और अनुमोदित करता है। परमेश्वर जिसे भी आशीषित करता है और अनुमोदित करता है वह अच्छा है, और जिसे परमेश्वर श्रापित करता है और जिसकी निंदा करता है वह बुरा होता है।

अतः जब परमेश्वर ने सृष्टि के वर्णन में मनुष्यजाति को आशीषित किया, तो उसने दर्शाया कि मनुष्यजाति नैतिक रूप से अच्छी थी। और महत्वपूर्ण बात यह है कि परमेश्वर कोई संकेत नहीं देता कि मनुष्यजाति ने इस आशीष को पाने के लिए कुछ भी किया था। इसके विपरीत, वे बस केवल रचे गए थे, इसलिए परमेश्वर की आशीष उनके व्यवहार की पुष्टि नहीं बल्कि उनके अस्तित्व की पुष्टि थी। परमेश्वर ने उन्हें आशीष दी क्योंकि उनके अन्दर अच्छाई की एक जन्मजात विशेषता थी।

हमने यहाँ पर मनुष्यजाति के परमेश्वर के स्वरूप में होने को देख लिया है और मनुष्यजाति पर परमेश्वर की आशीष पर ध्यान दे लिया है, तो अब हमें उस सांस्कृतिक आदेश को संक्षिप्त रूप से संबोधित करना चाहिए जो परमेश्वर ने मनुष्यजाति को दिया है।

सांस्कृतिक आदेश

जैसा कि हमने इस अध्याय में पहले देखा, उत्पत्ति 1:28 मनुष्यजाति के प्रति परमेश्वर के सांस्कृतिक आदेश को दर्शाता है। हम इन शब्दों को यहाँ पढ़ते हैं:

> परमेश्वर ने उन से कहा, फूलो-फलो, और पृथ्वी में भर जाओ, और उसको अपने वश में कर लो; और समुद्र की मछलियों, तथा आकाश के पक्षियों, और पृथ्वी पर रेंगने वाले सब जन्तुओ पर अधिकार रखो। (उत्पत्ति 1:28)

परमेश्वर के स्वरूप में मनुष्यजाति की भूमिका के संबंध में परमेश्वर ने मनुष्यजाति को पृथ्वी पर अपने वासल राजाओं के रूप में नियुक्त किया कि वे उसकी महिमा के लिए इसे भरें, इस पर अधिकार करें और इस

पर शासन करें। इस कार्य के द्वारा परमेश्वर ने दर्शाया कि मनुष्यजाति इस कार्य को करने के लिए केवल भौतिक रूप से सक्षम नहीं बल्कि नैतिक रूप से भी योग्य है।

जब हमें मूल रूप से रचा गया था तो मनुष्यजाति परमेश्वर के निवास के लिए एक पवित्र, धर्मी राज्य का निर्माण करने में सक्षम थी। और हम बिना नाश हुए परमेश्वर की प्रकट उपस्थिति में सेवा करने के योग्य थे। ऐसा करने के लिए परमेश्वर ने हमें हमारे अस्तित्व में नैतिक रूप से शुद्ध बनाया था और हमारे अन्दर अच्छाई की विशेषता दी थी एवं पाप की भ्रष्टता से दूर रखा था। फलस्वरूप, हम नैतिक रूप से अच्छे मार्गों को चुन सकते थे और उनके अनुसार कार्य कर सकते थे।

अतः हम देखते हैं कि परमेश्वर के लिए और मनुष्यजाति के लिए, अच्छाई हमारे अस्तित्व में स्थापित थी। परमेश्वर का अस्तित्व अपरिवर्तनीय है और इसलिए उसकी अच्छाई भी अपरिवर्तनीय है। परन्तु दुर्भाग्यवश, मनुष्यजाति का अस्तित्व बुराई में बदल गया। परमेश्वर ने हमें जन्मजात अच्छाई के साथ रचा था। परन्तु जैसा कि हम देखेंगे, पाप ने हमारे अस्तित्व को भ्रष्ट कर दिया जिससे कि यह फिर अच्छाई का स्त्रोत नहीं रहा।

यहाँ पर हमनें सृष्टि के समय प्रकट अच्छाई और अस्तित्व के बीच संबंध को देख लिया है, इसलिए अब हम पतन के समय की ओर मुड़ने के लिए तैयार हैं। विशेषकर हम देखेंगे कि किस प्रकार पाप ने मनुष्यजाति के अस्तित्व को क्षति पहुंचाई और हमारी अच्छाई को नष्ट किया।

पतन

हम सब मनुष्यजाति के पाप में पतन के बाइबल के वर्णन से परिचित हैं, जो कि उत्पत्ति 3 में पाया जाता है। परमेश्वर ने आदम और हव्वा को बनाया और उन्हें अदन की वाटिका में रख दिया। और यद्यपि उसने उन्हें वाटिका में काफी आज़ादी दी थी, परन्तु इसके साथ-साथ विशेष निषेधाज्ञा भी दी थी: उन्हें भले और बुरे के ज्ञान के वृक्ष के फल को खाने की अनुमति नहीं थी।

परन्तु निसंदेह, सांप ने हव्वा को वह फल खाने का लालच दिया और उसने वह फल खा लिया। तब उसने थोडा सा फल आदम को भी दिया और उसने भी खा लिया। और फलस्वरूप उनका पाप में पतन हो गया, परमेश्वर ने आदम और हव्वा को भयंकर परिणामों के साथ श्राप दिया जो न केवल उन पर लागू हुए बल्कि उस सारी मनुष्यजाति पर भी लागू हुए जो उनके द्वारा आनी थी।

हम मनुष्यजाति के पाप में पतन के तीन परिणामों की चर्चा करेंगे। पहला, हम हमारे स्वभाव की भ्रष्टता के बारे में बात करेंगे। दूसरा, हम देखेंगे कि पतन के कारण हमारी इच्छा पाप की गुलाम हो गयी जिससे कि हमने नैतिक रूप से अच्छी बातों को चुनने और करने की योग्यता को खो दिया। और तीसरा, हम उन रूपों की चर्चा करेंगे जिसमें पतन ने हमारे ज्ञान को प्रभावित किया जिससे कि हम नैतिक अच्छाई को पूरी तरह से पहचानने में अक्षम हो गए। आइये, हम हमारे स्वभाव की भ्रष्टता के बारे में बात करें जो मनुष्यजाति के पाप में पतन के समय हुआ।

चलचित्र, अध्ययन मार्गदर्शिका एवं कई अन्य संसाधनों के लिये, हमारी वेबसाइट thirdmill.org पर जाएँ।

स्वभाव

जब हम मनुष्यों के स्वभाव के बारे में बात करते हैं तो हमारे मन में हमारा मूलभूत चरित्र, अर्थात् हमारे अस्तित्व के मुख्य पहलू होते हैं।

जैसा कि हम देख चुके हैं, जब परमेश्वर ने आदम और हव्वा को बनाया तो वे सिद्ध और निष्पाप थे। उनके सारे चरित्र और विशेषताएं अच्छी थीं और परमेश्वर को प्रसन्न करने वाली थीं। और इसलिए, हम कह सकते हैं कि सृष्टि के समय मानवीय स्वभाव नैतिक रूप से अच्छा था। परन्तु पतन के समय परमेश्वर ने आदम और हव्वा को उनके पाप के कारण श्राप दिया। और इस श्राप के एक भाग के रूप में उसने उनके स्वभाव को बदल दिया जिससे कि मनुष्यजाति का आधारभूत चरित्र नैतिक रूप से अच्छा नहीं रहा बल्कि नैतिक रूप से बुरा हो गया।

रोमियों 5:12, 19 में पौलुस ने आदम को दिए श्राप के बारे में ये शब्द लिखे:

> एक मनुष्य के द्वारा पाप जगत में आया, और पाप के द्वारा मृत्यु आई, और इस रीति से मृत्यु सब मनुष्यों में फैल गई, इसलिये कि सब ने पाप किया... एक मनुष्य के आज्ञा न मानने से बहुत लोग पापी ठहरे। (रोमियों 5:12, 19)

आदम के एक पाप का परिणाम हुआ कि सारी मनुष्यजाति का पाप में पतन हो गया। और मनुष्यजाति पर श्राप के प्रभाव से हम सब का स्वभाव भी भ्रष्ट हो गया जिसके कारण मृत्यु और पाप आये। रोमियों 8:5-8 को सुनें जहाँ पौलुस ने पतन के प्रभावों का वर्णन इस प्रकार से किया:

> शारीरिक व्यक्ति शरीर की बातों पर मन लगाते हैं... क्योंकि शरीर पर मन लगाना तो परमेश्वर से बैर रखना है, क्योंकि न तो परमेश्वर की व्यवस्था के आधीन है, और न हो सकता है। और जो शारीरिक दशा में है, वे परमेश्वर को प्रसन्न नहीं कर सकते। (रोमियों 8:5-8)

पतित मानवजाति का स्वभाव इतना भ्रष्ट हो गया कि अब यह नैतिक रूप से अच्छा नहीं रहा। इसके विपरीत हमारा पतित स्वभाव बुरा है। हम पाप की अभिलाषा करते हैं। हम परमेश्वर से घृणा करते हैं। हम उसकी व्यवस्था के विरुद्ध विद्रोह करते हैं। हम परमेश्वर को प्रसन्न नहीं कर सकते। और हम उसके अनुमोदन या आशीष को प्राप्त नहीं कर सकते।

हमारे स्वभाव की भ्रष्टता के बारे में बात करने के बाद, हम यह देखने के लिए तैयार हैं कि किस प्रकार मानवीय इच्छा पतन के फलस्वरूप पाप की गुलाम या दास हो गई।

इच्छा

हमें इच्छा की परिभाषा देने के साथ आरंभ करना चाहिए। विशिष्ट रूप से जब धर्मवैज्ञानिक हमारी इच्छा के बारे में बात करते हैं, तो उनके मन में निर्णय लेने, चुनने, लालसा रखने, आशा रखने और इरादा करने की व्यक्तिगत क्षमताएं होती हैं। सरल रूप में कहें तो इच्छा वह होती है जिसका प्रयोग हम निर्णय लेने या चुनने में करते हैं, और इसके साथ-साथ हम क्या करना, रखना या अनुभव करना चाहते हैं के बारे में सोचने में भी करते हैं।

चलचित्र, अध्ययन मार्गदर्शिका एवं कई अन्य संसाधनों के लिये, हमारी वेबसाइट thirdmill.org पर जाएँ।

अब, हमारी शेष विशेषताओं और क्षमताओं के समान हमारी इच्छा हमारे स्वभाव को दर्शाती है। पतन से पहले मानवीय इच्छा सिद्ध थी, इसकी रचना परमेश्वर और उसके चरित्र को दर्शाने के लिए हुई थी, और यह नैतिक रूप से अच्छे तरीकों से सोच और चुन सकती थी। परन्तु जैसे ही पतन हुआ मानवीय इच्छा भी ऐसी हो गयी कि यह ऐसे निर्णय लेने लगी जिससे परमेश्वर प्रसन्न नहीं हुआ।

जैसा कि हम पहले ही देख चुके हैं, पतन में आदम और हव्वा ने परमेश्वर के प्रति वफादारी की अपेक्षा पाप को चुनने में अपनी इच्छाओं का प्रयोग किया। और इसलिए परमेश्वर ने मनुष्यजाति को श्राप दिया। और इसका एक परिणाम यह रहा कि हमारी इच्छाएं भ्रष्ट हो गयीं, और हमारे लिए असंभव हो गया कि हम परमेश्वर को प्रसन्न करें।

रोमियों अध्याय 6-8 में पौलुस मनुष्यजाति को दिए गए इस श्राप का वर्णन करने के लिए दासत्व के रूपक का प्रयोग करता है। उसने दर्शाया कि पाप पतित मनुष्यों में वास करता है, हमारी इच्छाओं को दास बना लेता है ताकि हम सदैव पाप की अभिलाषा करें और उसे ही चुनें। रोमियों 8:5-8 को एक बार फिर सुनें जहाँ पौलुस ने इन शब्दों को लिखा:

> शारीरिक व्यक्ति शरीर की बातों पर मन लगाते हैं... क्योंकि शरीर पर मन लगाना तो परमेश्वर से बैर रखना है, क्योंकि न तो परमेश्वर की व्यवस्था के आधीन है, और न हो सकता है। और जो शारीरिक दशा में है, वे परमेश्वर को प्रसन्न नहीं कर सकते। (रोमियों 8:5-8)

पाप पतित मनुष्यों को वश में कर लेता है और हमारे लिए इस बात को असंभव बना देता है कि हम परमेश्वर की व्यवस्था के प्रति समर्पित रहें या उसे प्रसन्न करने के लिए कुछ भी करें।

अब इसका अर्थ यह नहीं कि हम अब कभी सही चुनाव नहीं करते। इसके विपरीत हम निरंतर हमारे स्वभाव के अनुसार इच्छा करते और चुनते हैं। परन्तु क्योंकि हमारा स्वभाव भ्रष्ट हो गया है इसलिए हम वह कुछ भी कर सकने में अक्षम हैं जो परमेश्वर को सम्मान और महिमा दे। पाप उस सबको दूषित या कलंकित कर देता है जो हम सोचते, करते या कहते हैं।

अब पहली नजर में पतित मनुष्य का यह मूल्यांकन शायद अतिश्योक्ति महसूस होता हो। आखिरकार पापमय लोग ऐसे कार्य करते हैं जो निश्चित रूप से अच्छे प्रतीत हों। एक भाव में इस बात का इंकार करना मूर्खता होगी। परन्तु हमें सदैव इस सतह के बाहर देखने में सावधान रहना चाहिए ताकि हम उन बातों को समझ सकें जो पतित और छुटकारा नहीं पाए हुए लोग करते हैं।

आप याद करेंगे कि इस श्रृंखला में पहले भी हम इस जटिल विषय को स्पष्ट करने के लिए विश्वास के वेस्टमिन्स्टर अंगीकरण अध्याय 16, अनुच्छेद 7 की ओर मुड़े थे। सुनिए एक बार फिर से कि यह क्या कहता है:

> अविश्वासी लोगों के द्वारा किए गए कार्य...शायद ऐसे कार्य हों जिनकी आज्ञा परमेश्वर देता है और वे उनके और दूसरों के प्रति भलाई करने वाले हों; परन्तु फिर भी वे विश्वास द्वारा शुद्ध किए गए हृदय से नहीं आते; न ही वे सही रूप में और न परमेश्वर के वचन के अनुसार किए जाते हैं, एवं न ही सही लक्ष्य के साथ होते और न ही परमेश्वर की महिमा के लिए किये जाते हैं; अतः वे पापमय होते हैं और परमेश्वर को प्रसन्न नहीं कर सकते और न ही मनुष्य को परमेश्वर का अनुग्रह दिला सकते हैं।

ये शब्द बहुत अच्छी तरह से पुनः जन्म न पाए, अर्थात मसीह के द्वारा छुटकारा नहीं पाए हुए लोगों की नैतिक अवस्था के बारे में बाइबल की शिक्षाओं को सारगर्भित करते हैं। और जैसे कि अंगीकरण कहता है, एक ऐसा भाव है जिनमे पुनः जन्म न पाए हुए लोग परमेश्वर की आज्ञाओं को मानते हैं, और एक ऐसा भाव भी है जिनमें वे अच्छे कार्य भी करते हैं।

यीशु ने यही सिद्धांत मत्ती 7:9-11 में सिखाया था, जहाँ उसने इन शब्दों को कहा था:

> तुम में से ऐसा कौन मनुष्य है, कि यदि उसका पुत्र उस से रोटी मांगे, तो वह उसे पत्थर दे? वा मछली मांगे, तो उसे सांप दे? सो जब तुम बुरे होकर, अपने बच्चों को अच्छी वस्तुएं देना जानते हो, तो तुम्हारा स्वर्गीय पिता अपने मांगने वालों को अच्छी वस्तुएं क्यों न देगा? **(मत्ती 7:9-11)**

अधिकांश लोग कम से कम कुछ कार्य ऐसे करते हैं जो बाहरी रूप से अच्छे होते हैं, जैसे कि अपने बच्चों से प्रेम करना और उनकी जरूरतों को पूरा करना। अतः एक ऐसा सतही भाव भी है जिसमे अविश्वासी ऐसे व्यवहारों को दर्शाते हैं जिन्हें परमेश्वर आशीष देता है।

फिर भी, वेस्टमिन्स्टर अंगीकरण सही रूप में एक और भाव को दर्शाता है जिनमें ये कार्य वास्तव में पापमय होते हैं और परमेश्वर को प्रसन्न नहीं कर सकते। और उसका कारण यह है कि ये कार्य धर्मी होने की कुछ ही आवश्यकताओं को पूरा करते हैं।

अंगीकरण यह दर्शाते हुए पवित्रशास्त्र की शिक्षाओं को सारगर्भित करता है कि हमारे कार्यों को वास्तव में अच्छा होने के लिए पांच परखों से होकर जाना जरूरी है। पहला, वे ऐसे कार्य होने चाहिए जिनकी आज्ञायें परमेश्वर देता है। दूसरा, वे अपने और दूसरों के लिए अच्छे इस्तेमाल के होने चाहिए। तीसरा, ये एक ऐसे हृदय से आने चाहिए जो विश्वास से शुद्ध किया गया हो। चौथा, वे सही रूप में किया जाने चाहिए। और पांचवां, वे एक सही लक्ष्य, अर्थात् परमेश्वर की महिमा, के साथ किये जाने चाहिए।

यह दृष्टिकोण नैतिक शास्त्र के उस दृष्टिकोण के अनुसार ही है जो हमने इस पूरी श्रृंखला में अपनाया है। पहला, यह वास्तविकता कि अच्छे कार्य वे होते हैं जिनकी आज्ञा परमेश्वर देता है और जो निर्देशात्मक दृष्टिकोण के समानांतर है जिनमें सारे कार्यों का निर्णय परमेश्वर के चरित्र के स्तर के अनुसार किया जाता है जैसा कि उसके वचन में दर्शाया जाता है।

दूसरा, अच्छे प्रयोग, सही लक्ष्य और सही तरीके पर दिया गया बल परिस्थिति-संबंधी दृष्टिकोण की वास्तविकताओं, लक्ष्यों और साधनों को सारगर्भित करता है।

और तीसरा, यह वास्तविकता कि अच्छे कार्य एक ऐसे हृदय से आने चाहिए जो विश्वास से शुद्ध हो, वह अस्तित्व-संबंधी दृष्टिकोण के समानांतर है जिसमें अधिकारिक अच्छे कार्य ऐसे लोगों के द्वारा किये जा सकते हैं जिनकी अच्छाई परमेश्वर में विश्वास के द्वारा पुनर्स्थापित की गयी है।

दुर्भाग्यवश, पतित मनुष्यजाति होने के कारण हमारे अस्तित्व भ्रष्ट हैं जिससे हमारे अन्दर स्वाभाविक रूप से वे हृदय नहीं हैं जो विश्वास से शुद्ध हों। और हमारी इच्छा सही लक्ष्य वाली बातों की अभिलाषा या कोशिश नहीं करती। और हम परमेश्वर की व्यवस्था के प्रति समर्पित होने से इंकार कर देते हैं। अतः, जब पुनः जन्म न पाए हुए लोग भी अच्छे चुनाव कर सकते हैं जो सतही रूप से अच्छे दिखते हों, परन्तु वे चुनाव वास्तव में अच्छे नहीं होते।

यहाँ पर हमने यह देख लिया है कि किस प्रकार पतन ने हमारे स्वभाव को भ्रष्ट कर दिया है और पाप के प्रति हमारी इच्छा को दास बना दिया है, इसलिए अब हम हमारे ज्ञान के बारे में बात करने के लिए तैयार

चलचित्र, अध्ययन मार्गदर्शिका एवं कई अन्य संसाधनों के लिये, हमारी वेबसाइट thirdmill.org पर जाएँ।

हैं, जिसमें हम विशेष रूप से इस बात पर ध्यान देंगे कि पतन ने परमेश्वर के स्तर को समझने में हमारी योग्यता को किस प्रकार हानि पहुंचाई है।

ज्ञान

पतन हमारे नैतिक ज्ञान को प्राप्त करने की योग्यता को हानि पहुँचा सकता है शायद इस बारे में बात करना हम में से कुछ को अजीब प्रतीत होता हो। आखिरकार, अविश्वासी बाइबल को उठाकर इसकी आज्ञाओं को समझ सकते हैं। और पवित्रशास्त्र स्वयं पुष्टि करता है कि अविश्वासी भी परमेश्वर के बारे में बहुत सी सच्ची बातें जानते हैं। परन्तु जब हम पवित्रशास्त्र को और अधिक गहराई से देखते हैं, तो हम पाते हैं कि यद्यपि पतित और छुटकारा न पाए हुए मनुष्य कुछ सच्चे ज्ञान को रखते हैं, परन्तु पतन ने उन्हें परमेश्वर की आज्ञाओं के उचित ज्ञान को प्राप्त करने से रोक दिया है।

नैतिक ज्ञान पर पतन के प्रभाव की हमारी चर्चा तीन भागों में विभाजित होगी। पहला, हम यह बात करेंगे कि किस प्रकार पाप प्रकाशन की ओर मनुष्यजाति की पहुँच को बाधित करता है। दूसरा, हम यह उल्लेख करेंगे कि किस प्रकार पाप प्रकाशन के बारे में मनुष्य की समझ को बाधित करता है। और तीसरा, हम प्रकाशन के प्रति मनुष्यजाति की आज्ञाकारिता पर पाप के प्रभाव की जांच करेंगे। आइये हम इस बात से आरंभ करें कि किस प्रकार प्रकाशन के प्रति मनुष्यजाति की पहुँच पतन से बाधित हुई है।

प्रकाशन के प्रति पहुँच

एक मुख्य तरीका जिसके द्वारा पतन ने मनुष्यजाति के प्रकाशन के प्रति पहुँच को बाधित किया है, वह है प्रकाशन देने और आंतरिक अगुवाई के पवित्र आत्मा के कार्य को सीमित करना। अब, यह इसलिए नहीं कि पवित्र आत्मा किसी तरह से पतित मनुष्यजाति के प्रति सेवा करने में अक्षम है। बल्कि, यह इसलिए है कि परमेश्वर ने इन दैवीय वरदानों से दूर करते हुए मानवजाति को श्राप दिया था।

जैसा कि आप हमारे पिछले अध्यायों से याद करेंगे, प्रकाशन ज्ञान या समझ का दैवीय वरदान है जो कि मुख्य रूप से बौद्धिक है, जैसे कि यह ज्ञान कि यीशु मसीहा है, जो पतरस ने मत्ती 16:17 में प्राप्त किया था।

और आन्तरिक अगुवाई ज्ञान या समझ का वह दैवीय वरदान है जो मुख्य रूप से भावनात्मक है। इसमें अन्तःकरण जैसी बातें आती हैं, और यह भाव भी कि परमेश्वर हमसे एक विशेष कार्य करवाएगा।

किसी भाव में, परमेश्वर सारी पतित मनुष्यजाति को एक माप में प्रकाशन और आन्तरिक अगुवाई दोनों प्रदान करता है। उदाहरण के तौर पर, गैरविश्वासियों के पास भी परमेश्वर की व्यवस्था का नैसर्गिक ज्ञान होता है। उनमें से अधिकांश न्याय को चाहते हैं और यह पहचानते हैं कि चोरी करना और हत्या करना गलत है। इसी प्रकार, गैरविश्वासी विवेक के द्वारा चेताए जाते हैं जब वे कोई पाप करते हैं।

परन्तु पवित्र आत्मा गैरविश्वासियों को प्रकाशन और आन्तरिक अगुवाई उस माप में प्रदान नहीं करता जितना वह विश्वासियों को प्रदान करता है। वह उनके भीतर इतना ही काम करता है कि वह परमेश्वर के नियमों की अवहेलना करने के कारण उनको दोषी ठहराए। और इसका कारण सरल है: परमेश्वर ने इस प्रकार अपने आपको प्रकट करने को चुना था जो उससे प्रेम करने वालों को आशीष दे और उससे घृणा करने वालों को श्राप दे।

यूहन्ना 17:26 की तुलना करें, जहाँ यीशु ने पिता से इन शब्दों में प्रार्थना की:

चलचित्र, अध्ययन मार्गदर्शिका एवं कई अन्य संसाधनों के लिये, हमारी वेबसाइट thirdmill.org पर जाएँ।

> और मैं ने तेरा नाम उन को बताया और बताता रहूंगा कि जो प्रेम तुझ को मुझ से था, वह उन में रहे और मैं उन में रहूं। (यूहन्ना 17:26)

यीशु ने परमेश्वर और अपने लोगों के बीच प्रेम और एकता को स्थापित करने के लिए विश्वासियों के समक्ष अपने आपको रखा। इसके विपरीत, वह अपने शत्रुओं को अपना केवल थोडा सा ज्ञान देता है, केवल इतना ही की वह उन्हें दंड के अधीन ला सके।

पतित मनुष्यजाति की प्रकाशन के प्रति पहुँच को कम करने के अतिरिक्त, पतन ने प्रकाशन के प्रति मनुष्यजाति के ज्ञान को भी बाधित किया।

प्रकाशन की समझ

पाप में मनुष्यजाति के पतन ने परमेश्वर के प्रकाशन के प्रति हमारी समझने की योग्यता को कम कर दिया है। यद्यपि पतित मनुष्य प्रकाशन को काफी हद तक समझ सकते हैं, परन्तु हम में उन अनेक बातों की कमी है जो उसे समझने के लिए जरूरी हैं। हमारे पास अब भी परमेश्वर के प्रकाशन की मूल शिक्षाओं को समझने की योग्यता है। परन्तु नैतिक समझ मात्र बौद्धिक समझ से अधिक बातों पर निर्भर होती है; इसमें सम्पूर्ण व्यक्तित्व शामिल होता है।

हमारे नैतिक निर्णय वास्तविकताओं के अलग-थलग मूल्यांकन नहीं है। बल्कि अनेक गैर-बौद्धिक कारण हमारे नैतिक मूल्यांकनों को प्रभावित करते हैं, जैसे हमारी भावनाएं, विवेक, अन्तःकरण, वफ़ादारी, अभिलाषाएं, डर, असफलताएं, परमेश्वर का स्वाभाविक तिरस्कार, एवं और भी बहुत कुछ।

मत्ती 13:13-15 में यीशु ने इस समस्या का उल्लेख किया जब उसने दृष्टान्तों के अपने इस्तेमाल को स्पष्ट किया था।

> वे देखते हुए नहीं देखते; और सुनते हुए नहीं सुनते; और नहीं समझते। और उन के विषय में यशायाह की यह भविष्यवाणी पूरी होती है, कि तुम कानों से तो सुनोगे, पर समझोगे नहीं; और आंखों से तो देखोगे, पर तुम्हें न सूझेगा। क्योंकि इन लोगों का मन मोटा हो गया है, और वे कानों से ऊंचा सुनते हैं और उन्होंने अपनी आंखें मूंद ली हैं। (मत्ती 13:13-15)

पतित मनुष्यों के पास परमेश्वर के प्रकाशन को प्राप्त करने के लिए आँखें और कान होते हैं। परन्तु हमारे ह्रदय परमेश्वर और उसके सत्य के विरुद्ध कठोर हो जाते हैं। और यह प्रायः हमें उस प्रकाशन को समझने से रोक देता हैं जो हम प्राप्त करते हैं।

इफिसियों 4:17-18 में पौलुस ने इस प्रकार इस समस्या के बारे में बात की:

> जैसे अन्यजातीय लोग अपने मन की अनर्थ की रीति पर चलते हैं, तुम अब से फिर ऐसे न चलो। क्योंकि उनकी बुद्धि अन्धेरी हो गई है और यह उस अज्ञानता के कारण जो उन में है और उनके मन की कठोरता के कारण है। (इफिसियों 4:17-18)

पतन में हुई मनुष्यजाति की भ्रष्टता का परिणाम यह हुआ कि हमारे ह्रदय कठोर हो गए। और यह कठोरता हमें परमेश्वर के प्रकाशन को उचित रूप से समझने से रोकती है।

कई रूपों में हमारा तर्क और हमारी बुद्धि वैसे ही कार्य करते हैं जैसे उन्हें करना चाहिए। और यह एक कारण है कि परमेश्वर अपने प्रकाशन को समझने के लिए हमें जिम्मेदार ठहराता है। परन्तु पतन ने हमें भ्रष्ट कर

दिया है जिससे कि हम परमेश्वर का विरोध करते हैं और उसके सत्य को नहीं मानते। अतः परमेश्वर से सच्चे ज्ञान को स्वीकार करने की अपेक्षा हम अपने आपको उन झूठी बातों में लगा देते हैं जो हमारा पापी हृदय सोचता है।

यह देखने के बाद कि पतित मनुष्यजाति की प्रकाशन के प्रति पहुँच सीमित है और प्रकाशन की समझ भी धुंधली है, अब हमें यह देखने की ओर मुड़ना चाहिए कि प्रकाशन के प्रति हमारी आज्ञाकारिता भी पतन के कारण भ्रष्ट हो गयी है।

प्रकाशन के प्रति आज्ञाकारिता

अब आज्ञाकारिता को ज्ञान के एक पहलू के रूप में सोचना शायद अजीब प्रतीत हो। आखिरकार, हम सामान्यतः सोचते हैं कि प्रकाशन हमें ज्ञान प्रदान करता है, और हम आज्ञाकारिता को एक अलग कदम के रूप में सोचते हैं जो ज्ञान के बाद आता है। और एक ऐसा एक भाव भी है जिसमे यह ठीक भी है। परन्तु एक अलग भाव यह भी है जिसमें ज्ञान और आज्ञाकारिता मूल रूप से एक ही चीज हैं। और इस भाव में, पतन परमेश्वर की आज्ञा मानने की हमारी योग्यता को नाश करने के द्वारा परमेश्वर के प्रति हमारे ज्ञान को बाधित करता है।

इस बात को समझने के लिए कि किस प्रकार परमेश्वर की आज्ञा मानने की हमारी योग्यता उसके स्तर के हमारे ज्ञान को बाधित करती है, हम ज्ञान और आज्ञाकारिता के बीच के संबंध के केवल दो पहलुओं पर ध्यान देंगें। पहला, पवित्रशास्त्र में आज्ञाकारिता और ज्ञान के बीच एक आपसी संबंध है। और दूसरा, हम उन कुछ रूपों को देखेंगे जिसमें यह कहा जा सकता है कि बाइबल में ये दो विचार एक-दूसरे से अभिन्न हैं। हम इस विचार के साथ आरंभ करेंगे कि आज्ञाकारिता परमेश्वर के ज्ञान और उसके स्तरों की ओर अगुवाई करती है।

पवित्रशास्त्र में आज्ञाकारिता और ज्ञान के बीच एक आपसी संबंध है। एक ओर परमेश्वर का ज्ञान परमेश्वर के प्रति आज्ञाकारिता को उत्पन्न करता है। हम इसे 2 पतरस 1:3 जैसे अनुच्छेदों में देखते हैं जहाँ पतरस ने ये शब्द लिखे:

> क्योंकि उसके ईश्वरीय सामर्थ ने सब कुछ जो जीवन और भक्ति से सम्बन्ध रखता है, हमें उसी की पहचान के द्वारा दिया है, जिस ने हमें अपनी ही महिमा और सद्गुण के अनुसार बुलाया है। (2 पतरस 1:3)

यहाँ ज्ञान को हमारे जीवनों में जीवन और भक्ति को उत्पन्न करने के उद्देश्य के लिए दिया गया है।

पुनः, यह उस तरीके का अनुसरण करता है जिसकी हम अपेक्षा करते हैं: पहले हम परमेश्वर के प्रकाशन को प्राप्त करते और समझते हैं और फिर हम आज्ञापूर्वक उसे हमारे जीवन में लागू करते हैं। परन्तु अगर हम इसे उल्टा कर दें तो वह भी सही है। पवित्रशास्त्र में आज्ञाकारिता के लिए ज्ञान पहली आवश्यकता है, और परमेश्वर के प्रकाशन का हमारे जीवनों में आज्ञापूर्ण पालन उसके ज्ञान की ओर हमारी अगुवाई करता है। जैसा कि नीतिवचन 1:7 हमें सिखाता है:

> यहोवा का भय मानना बुद्धि का मूल है; बुद्धि और शिक्षा को मूढ़ ही लोग तुच्छ जानते हैं। (नीतिवचन 1:7)

और हम नीतिवचन 15:33 में पढ़ते हैं:

चलचित्र, अध्ययन मार्गदर्शिका एवं कई अन्य संसाधनों के लिये, हमारी वेबसाइट thirdmill.org पर जाएँ।

> यहोवा के भय मानने से शिक्षा प्राप्त होती है, और महिमा से पहले नम्रता होती है। (नीतिवचन 15:33)

इस और पवित्रशास्त्र के कई अन्य पदों में ज्ञान आज्ञाकारिता से आता है। अर्थात्, जब हम स्वयं को परमेश्वर की प्रभुता के प्रति समर्पित कर देते हैं तो हम उसके प्रकाशन को समझने की अवस्था में आ जाते हैं।

परन्तु पतन ने हमारे स्वभाव और इच्छा को इस हद तक भ्रष्ट कर दिया है कि हम परमेश्वर के विरुद्ध विद्रोह करते हैं। और वास्तव में, हम उसके वचन के प्रति समर्पित होने में असमर्थ हो जाते हैं।

और क्योंकि ज्ञान आज्ञाकारिता से आता है, इसलिए ऐसे लोग जो परमेश्वर की आज्ञा नहीं मान सकते वे सच्चाई से उसे जान भी नहीं सकते। दूसरे शब्दों में कहें तो, जिस प्रकार आज्ञाकारिता ज्ञान की ओर हमारी अगुवाई करती है, वैसे ही पाप अज्ञानता की ओर हमारी अगुवाई करता है।

पतन के द्वारा पैदा की गयी समस्याओं को देखने के बाद, क्योंकि आज्ञाकारिता प्रकाशन के ज्ञान की ओर अगुवाई करती है, अब हम इस विचार पर ध्यान देने के लिए तैयार हैं कि बाइबल में ये दो विचार एक-दूसरे से अभिन्न हैं या एक-दूसरे से जुड़े हुए हैं।

पवित्रशास्त्र में, प्रायः ऐसा होता है कि आज्ञाकारिता और ज्ञान की बातों को समानार्थी समझा जाता है। कभी-कभी उन्हें समानाधिकरण के रूप में रखा जाता है जिससे कि एक भाव दूसरे को स्पष्ट करता है। उदाहरण के तौर पर, होशे 6:6 को सुनें:

> क्योंकि मैं बलिदान से नहीं, स्थिर प्रेम ही से प्रसन्न होता हूं, और होमबलियों से अधिक यह चाहता हूं कि लोग परमेश्वर का ज्ञान रखें। (होशे 6:6)

इस पद में बलिदान की अपेक्षा विश्वासयोग्यता और होम बालियों की अपेक्षा परमेश्वर के ज्ञान की शब्दावलियों को एक-दूसरे के समानार्थी रखा गया है, अर्थात् कि दूसरी शब्दावली स्पष्टता के लिए पहली शब्दावली को पुनः बताती है। अतः, बलिदान होम बालियों का पर्यायवाची है, और विश्वासयोग्यता, जो कि आज्ञाकारिता का ही एक रूप है, परमेश्वर के ज्ञान का पर्यायवाची है।

अन्य स्थानों पर आज्ञाकारिता और ज्ञान को एक-दूसरे के लिए परिभाषा के रूप में दिया जाता है। उदाहरण के तौर पर यिर्मयाह 22:16 में यहोवा ने इन शब्दों को कहा:

> वह इस कारण सुख से रहता था क्योंकि वह दीन और दरिद्र लोगों का न्याय चुकाता था। क्या यही मेरा ज्ञान रखना नहीं है? (यिर्मयाह 22:16)

यहाँ परमेश्वर के ज्ञान को परमेश्वर के प्रति की गयी आज्ञाकारिता के आधार पर परिभाषित किया गया है, विशेषकर न्याय करने के रूप में।

तीसरा, पवित्रशास्त्र कभी-कभी एक को दूसरे के उदाहरण के रूप में इस्तेमाल करने के द्वारा आज्ञाकारिता और ज्ञान के बीच समानता को दिखाता है। होशे 4:1 पर ध्यान दें जहाँ भविष्यवक्ता ने इस रूप में इस्राएल पर दोष लगाया:

> हे इस्राएलियों, यहोवा का वचन सुनो; इस देश के निवासियों के साथ यहोवा का मुकद्दमा है। इस देश में न तो कुछ सच्चाई है, न कुछ करूणा और न कुछ परमेश्वर का ज्ञान ही है। (होशे 4:1)

चलचित्र, अध्ययन मार्गदर्शिका एवं कई अन्य संसाधनों के लिये, हमारी वेबसाइट thirdmill.org पर जाएँ।

होशे ने उन तीन बातों को बताया जिनमें इस्राएली असफल हो गए थे और जिनके फलस्वरूप परमेश्वर उनसे क्रोधित हुआ: वे अविश्वासयोग्य थे, वे प्रेम करने वाले नहीं थे, और वे परमेश्वर को नहीं जानते थे। नैतिक उदाहरणों की इस सूची में परमेश्वर के ज्ञान को शामिल करने के द्वारा होशे ने दर्शाया कि ज्ञान आज्ञाकारिता का ही एक भाग है, और परमेश्वर को जानने की हमारी एक नैतिक जिम्मेदारी है।

अब आज्ञाकारिता और ज्ञान का सदैव एक ही अर्थ नहीं होता है। फिर भी पवित्रशास्त्र इन दोनों विचारों को बहुत घनिष्ठता से जोडता है और बहुत ही महत्वपूर्ण रूप में सिखाता है कि यदि हम परमेश्वर की आज्ञा नहीं मान सकते तो हम उसे जान नहीं सकते।

पतन ने मनुष्यजाति का सर्वनाश कर दिया। आदम और हव्वा पर परमेश्वर के श्राप ने हर उस मनुष्य के स्वभाव, इच्छा, और ज्ञान को भ्रष्ट कर दिया जो भौतिक रूप से उनके द्वारा उत्पन्न हुए। और इसके नैतिक परिणाम विनाशकारी हैं- कोई भी मनुष्य ऐसा कुछ भी सोच, कह या कर नहीं सकता जो नैतिक रूप से अच्छा हो। हमारे सारे विचार, शब्द, और कार्य किसी न किसी रूप में पापमय होते हैं क्योंकि हम पतित, पापी लोग हैं। इसलिए, जब कभी भी हम नैतिक निर्णय लेते हैं, तो हमें उन बातों के बारे में सोचना चाहिए जिनमें पतन ने हर एक मनुष्य को प्रभावित किया है।

सृष्टि और पतन के समय के दौरान अच्छाई और अस्तित्व के विषय पर चर्चा करने के बाद, हम छुटकारे के समय को देखने के लिए तैयार हैं, अर्थात् एक ऐसा समय जब परमेश्वर उन लोगों को पुनर्स्थापित करता है जो उद्धार के लिए उस पर भरोसा रखते हैं और उनको अच्छाई के लिए सामर्थ देता है।

छुटकारा

छुटकारे का समय पतन के ठीक बाद आरम्भ हुआ जब परमेश्वर ने आदम और हव्वा पर दया दिखाई- उस समय भी जब उसने उनके पापों के लिए श्राप दिया। पिछले अध्यायों में, हमने इसे “पहला सुसमाचार” कहा है जब परमेश्वर ने पतन द्वारा की गयी क्षति की भरपाई के लिए छुटकारा देने वाले को भेजने का प्रस्ताव दिया।

परन्तु, छुटकारे के समय ने पतन के सारे प्रभावों को एकदम से दूर नहीं कर दिया। बल्कि, छुटकारा एक धीमी प्रक्रिया रहा है, और यह तभी पूरा होगा जब यीशु महिमा में पुनः आएगा। तब तक विश्वासियों और सारे मनुष्यों पर पतन के परिणाम निरंतर जारी रहेंगे।

फिर भी, जब लोग छुडाये जाते हैं, गैरविश्वासी विश्वासी बन जाते हैं, तो वे महत्वपूर्ण और अद्वितीय रूपों में पतन के परिणामों से बचाए जाते हैं।

हम विश्वासियों के छुटकारे के बारे में चर्चा ऐसे करेंगे कि यह पतन के ठीक विपरीत हुआ और यह हमारी पहले की चर्चा के सामानांतर होगा। पहला, हम हमारे स्वभाव पर ध्यान देंगे, इसमें हम इस बात पर ध्यान देंगे कि किस प्रकार छुटकारा हमारी जन्मजात अच्छाई को पुनर्स्थापित करता है। दूसरा, हम हमारी मानवीय इच्छा और पाप से हमारी मुक्ति के बारे में बात करेंगे। और तीसरा, हम ज्ञान पर ध्यान देंगे, अर्थात् परमेश्वर के प्रकाशन का उचित प्रयोग करने की हमारी योग्यता की पुनर्स्थापना। आइए, इस बात से आरंभ करें कि किस प्रकार हमारा स्वभाव पुनर्स्थापित हो जाता है जब हम छुटकारा पाते हैं।

चलचित्र, अध्ययन मार्गदर्शिका एवं कई अन्य संसाधनों के लिये, हमारी वेबसाइट thirdmill.org पर जाएँ।

स्वभाव

आपको याद होगा कि हमारा स्वभाव ही हमारा मूलभूत चरित्र है; हमारे अस्तित्व का केन्द्रीय पहलू। और जैसा कि हम देख चुके हैं, हमारा पतित स्वभाव बुरा है। हम परमेश्वर से बैर रखते हैं और पाप से प्रेम करते हैं, और हम नैतिक अच्छाई के अयोग्य हैं।

परन्तु जब हम मसीह में छुटकारा पाते हैं, तो हमारा स्वभाव नया हो जाता है। जब पवित्र आत्मा हमें नया जन्म देता है तो वह हमें अच्छा स्वभाव देता है, ऐसा स्वभाव जो परमेश्वर से प्रेम करता है और पाप से घृणा करता है। और यह हमारी नैतिक योग्यता को पुनर्स्थापित करता है जिससे कि हम सच्ची अच्छाई के योग्य बन जाते हैं। यहेजकेल 36:26 को सुनें जहाँ परमेश्वर ने मसीह में आने वाले भविष्य के छुटकारे के बारे में बात की:

> मैं तुम को नया मन दूंगा, और तुम्हारे भीतर नई आत्मा उत्पन्न करूंगा; और तुम्हारी देह में से पत्थर का हृदय निकाल कर तुम को मांस का हृदय दूंगा। (यहेजकेल 36:26)

और रोमियों 6:6-11 में पौलुस ने इस प्रकार इस विषय के बारे में बात की:

> हमारा पुराना मनुष्यत्व उसके साथ क्रूस पर चढ़ाया गया, ताकि पाप का शरीर व्यर्थ हो जाए, ताकि हम आगे को पाप के दासत्व में न रहें। क्योंकि जो मर गया, वह पाप से छूटकर धर्मी ठहरा... तुम भी अपने आप को पाप के लिये तो मरा, परन्तु परमेश्वर के लिये मसीह यीशु में जीवित समझो। (रोमियों 6:6-11)

पुराने और नये नियम दोनों की गवाही यह है कि पतित मनुष्य में पापी हृदय और आत्माएं हैं। परन्तु जब परमेश्वर हमें छुड़ाता है, तो वह हमारी पुनः रचना करता है, हमें नए हृदय और आत्माएं देता है जो पापी नहीं बल्कि धर्मी हों। और इन नए स्वभावों के साथ हम पहली बार परमेश्वर से प्रेम कर सकते हैं और उसके वचन के प्रति समर्पित हो सकते हैं और इस प्रकार उसकी आशीषों को प्राप्त कर सकते हैं।

निसंदेह, हमारे नए स्वभावों के साथ भी हमारा छुटकारा अभी तक पूर्ण नहीं हुआ है, हम अभी भी पाप के द्वारा विकृत हैं। इसीलिए मरकुस 10:18 में यीशु ने यह कथन कहा:

> कोई उत्तम नहीं, केवल एक अर्थात् परमेश्वर। (मरकुस 10:18)

छुटकारा पाई हुई मनुष्यजाति में एक हद तक अच्छाई होती है, परन्तु हम परमेश्वर के समान सिद्ध प्राणी नहीं हैं। फिर भी, हमारे नए स्वभाव परमेश्वर के लिए यह संभव बनाते हैं कि वह हमें अद्वितीय रूप में आशीष दे।

मन में छुटकारा पाए हुए स्वभाव की इस धारणा के साथ हमें हमारी इच्छा की पुनर्स्थापना की ओर मुड़ना चाहिए जो तब होती है जब हम छुटकारे को अनुभव करना आरंभ करते हैं।

इच्छा

हमारी इच्छा हमारी व्यक्तिगत क्षमता है जो निर्णय लेने, चुनने, अभिलाषा करने, आशा करने और इरादा करने की क्षमता रखती है। जैसा कि हम देख चुके हैं, पाप में पतन ने हमारे लिए असंभव कर दिया कि हम शुद्ध और धर्मी रूपों में हमारी इच्छाओं का प्रयोग करें। पौलुस ने इस भ्रष्टता का वर्णन गुलामी या दासत्व

चलचित्र, अध्ययन मार्गदर्शिका एवं कई अन्य संसाधनों के लिये, हमारी वेबसाइट thirdmill.org पर जाएँ।

के रूप में किया और यह सिखाया कि हमारी पतित और छुटकारा न पायी हुई इच्छाएं उस पाप के गुलाम हैं जो हमारे भीतर वास करता है। पाप के प्रति इस गुलामी के कारण हमारे अन्दर ऐसे चुनावों को करने की योग्यता नहीं हैं जिससे परमेश्वर प्रसन्न हो और हमारे अन्दर उसको प्रसन्न करने की कोई अभिलाषा भी नहीं है।

परन्तु जब हम मसीह में विश्वास में आते हैं, तो पाप का हमारी इच्छा पर अधिकार टूट जाता है और इसलिए हमें पाप की अभिलाषा करने या इसे चुनने के लिए मजबूर नहीं किया जाता। इससे बढ़कर, पवित्र आत्मा हमारे अन्दर वास करने लगता है और हमारी इच्छाओं को सामर्थी बनाता है और परमेश्वर से प्रेम करने और उसकी आज्ञा मानने के लिए प्रेरित करता है। यहेजकेल 36:27 में यहोवा ने छुटकारे के इस पहलू के बारे में बात की, जहाँ उसने छुटकारे के साथ इस आशीष को भी प्रदान किया:

> और मैं अपना आत्मा तुम्हारे भीतर देकर ऐसा करूंगा कि तुम मेरी विधियों पर चलोगे और मेरे नियमों को मान कर उनके अनुसार करोगे। **(यहेजकेल 36:27)**

और जैसा कि पौलुस ने फिलिप्पियों 2:12-13 में लिखा:

> डरते और कांपते हुए अपने अपने उद्धार का कार्य पूरा करते जाओ। क्योंकि परमेश्वर ही है, जिसने अपनी सुइच्छा निमित्त तुम्हारे मन में इच्छा और काम, दोनों बातों के करने का प्रभाव डाला है। **(फिलिप्पियों 2:12-13)**

अब हमें यह याद रखना है कि हमारी इच्छा के नए हो जाने से हमारे जीवन की पाप की समस्या पूरी तरह से हल नहीं होती। पाप फिर भी हमारे अन्दर बना रहता है, इसलिए हमें निरंतर इसके विरुद्ध लड़ते रहना जरुरी है। परन्तु फर्क यह है: हम अब पाप के गुलाम नहीं रहते, और इसकी बातें मानने को मजबूर नहीं होते। परन्तु फिर भी पाप का विरोध करना बहुत कठिन हो सकता है। पौलुस ने रोमियों 7:21-23 में इस संघर्ष का वर्णन किया, जहाँ उसने मसीही जीवन के बारे में इन शब्दों को लिखा:

> जब मैं भलाई करने की इच्छा करता हूं, तो बुराई मेरे पास आती है। क्योंकि मैं भीतरी मनुष्यत्व से तो परमेश्वर की व्यवस्था से बहुत प्रसन्न रहता हूं। परन्तु मुझे अपने अंगो में दूसरे प्रकार की व्यवस्था दिखाई पड़ती है, जो मेरी बुद्धि की व्यवस्था से लड़ती है, और मुझे पाप की व्यवस्था के बन्धन में डालती है जो मेरे अंगों में है। **(रोमियों 7:21-23)**

हम इस प्रकार से मानवीय इच्छा पर बाइबल की शिक्षा को सारगर्भित कर सकते हैं: सृष्टि के समय हमारी इच्छा पाप करने और पाप का विरोध करने दोनों में सक्षम थी, परन्तु मनुष्यजाति का पाप में पतन हुआ तो हमने पाप का विरोध करने कि हमारी योग्यता को खो दिया। इसके साथ-साथ पाप एक स्वामी के रूप में हमारे अन्दर वास करने आया और हमारी इच्छा को गुलाम बना लिया।

छुटकारे में, हमारी इच्छाएं पुनर्स्थापित हो जाती हैं, और पाप का स्वामित्व टूट जाता है जिससे हम एक बार फिर पाप का विरोध करने में सक्षम हो जाते हैं। और पवित्र आत्मा हमारे अन्दर वास करता है ताकि हमें पाप के विरुद्ध सामर्थ दे और हमें प्रेरित करे।

दुर्भाग्यवश, छुटकारे के इस वर्तमान चरण में पाप अभी भी हमारे अन्दर वास करता है और हमारे अन्दर पाप के प्रभाव और पवित्र आत्मा के प्रभाव के बीच संघर्ष चलता रहता है। परन्तु जब यीशु हमारे छुटकारे को पूरा करने के लिए वापिस आयेगा तो हम पाप के हमारे अन्दर निवास से पूरी तरह से मुक्त हो जायेंगे और केवल पवित्र आत्मा के द्वारा प्रभावित होंगे जिससे कि हम कभी पाप को फिर से न चुनें।

चलचित्र, अध्ययन मार्गदर्शिका एवं कई अन्य संसाधनों के लिये, हमारी वेबसाइट thirdmill.org पर जाएँ।

हमारे स्वभाव और इच्छा पर ध्यान देने के बाद, हम छुटकारे के समय हमारे ज्ञान की पुनर्स्थापना के बारे में बात करने के लिए तैयार हैं।

ज्ञान

पहले की तरह ज्ञान के बारे में हमारी चर्चा तीन भागों में विभाजित होगी: पहला, प्रकाशन के प्रति हमारी पहुँच; दूसरा, प्रकाशन के बारे में हमारी समझ, और तीसरा, प्रकाशन के प्रति हमारी आज्ञाकारिता। आइए हम इस बात से आरंभ करें कि छुटकारे के समय प्रकाशन के प्रति हमारी पहुँच कैसे पुनर्स्थापित होती है।

प्रकाशन के प्रति हमारी पहुँच

जैसे कि आपको याद होगा, पतन पवित्र आत्मा से प्राप्त होने वाले उस प्रकाशन की ओर मनुष्यजाति की पहुँच को पूरी तरह से रोक देता है, जो कि ज्ञान या समझ का एक दैवीय वरदान है जो कि मुख्य रूप से बौद्धिक है।

हमने यह भी देखा था कि पतन पवित्र आत्मा से मिलने वाली उस आन्तरिक अगुवाई के प्रति पहुँच को भी रोक देता है, जो ज्ञान या समझ का दैवीय वरदान है जो कि मुख्य रूप से भावनात्मक है।

परन्तु छुटकारे में हमारे पास पवित्र आत्मा की सेवाओं के प्रति और अधिक पहुँच मिल जाती है। बल्कि हमें दोषी ठहराने के लिए पर्याप्त प्रकाशन देने की अपेक्षा आत्मा सुसमाचार के सत्य के प्रति और ऐसी कई अन्य बातों के प्रति हमें बोध कराता है जो हमारे उद्धार का भाग हैं। वह हमारे विवेक को परमेश्वर के चरित्र के बारे में संवेदनात्मक बनाता है और हमें भक्तिपूर्ण अंतर्बोध देता है। उदाहरण के तौर पर, 1 यूहन्ना 2;27 में यूहन्ना के शब्दों को सुनें:

> (पवित्र जन का) अभिषेक... तुम्हें सब बातें सिखाता है। (1 यूहन्ना 2:27)

और इफिसियों 1:17 में पौलुस ने प्रकाशन और आन्तरिक अगुवाई के बारे में इस तरह से कहा:

> हमारे प्रभु यीशु मसीह का परमेश्वर जो महिमा का पिता है, तुम्हें अपनी पहचान में, ज्ञान और प्रकाश का आत्मा दे। (इफिसियों 1:17)

प्रकाशन के प्रति हमारी पहुँच के अतिरिक्त, छुटकारा प्रकाशन के प्रति हमारी समझ को भी पुनर्स्थापित करता है, और वह भी पवित्र आत्मा की सेवा के द्वारा।

प्रकाशन की समझ

जैसा कि हम देख चुके हैं, पतन के कारण हम परमेश्वर के शत्रु बन जाते हैं और उसके सत्य का विरोध करते हैं जिससे हम परमेश्वर से सच्चे ज्ञान को स्वीकार करने की अपेक्षा हम झूठ में अपने आपको लगाये रखते हैं। परन्तु जब हम उद्धार पाते हैं तो पवित्र आत्मा हमारे हृदय को बदल देता है जिससे हम परमेश्वर से बैर करने की अपेक्षा उससे प्रेम करने लगते हैं। और वह हमारे मनों को नया कर देता है जिससे हम परमेश्वर द्वारा प्रकट सत्यों को समझ पाने के योग्य हो जाते हैं।

1 कुरिन्थियों 2:12-16 में पौलुस ने इस प्रकार से प्रकाशन की हमारी छुटकारा-प्राप्त समझ को स्पष्ट किया:

चलचित्र, अध्ययन मार्गदर्शिका एवं कई अन्य संसाधनों के लिये, हमारी वेबसाइट thirdmill.org पर जाएँ।

> हम ने वह आत्मा पाया है, जो परमेश्वर की ओर से है, कि हम उन बातों को जानें, जो परमेश्वर ने हमें दी हैं... शारीरिक मनुष्य परमेश्वर के आत्मा की बातें ग्रहण नहीं करता, क्योंकि वे उस की दृष्टि में मूर्खता की बातें हैं, और न वह उन्हें जान सकता है... परन्तु हम में मसीह का मन है। (1 कुरिन्थियों 2:12-16)

हमारे भीतर परमेश्वर के आत्मा के निवास के बिना हम परमेश्वर के सत्य को समझ नहीं पाएंगे। परमेश्वर के विरुद्ध हमारा विद्रोह हमारे विवेक को धुंधला कर देता है और हम परमेश्वर के चरित्र और कार्यों के बारे में सब प्रकार की भ्रांतियों पर विश्वास कर लेते हैं। परन्तु पवित्र आत्मा हमारे हृदयों और मनों की रखवाली करता है और हमें धोखा देने की पाप की शक्ति को नाश करता है एवं प्रकाशन को समझने में हमें सामर्थ देता है। कुलुस्सियों 1:9 में पौलुस के शब्दों को सुनें:

> जिस दिन से यह सुना है, हम भी तुम्हारे लिये यह प्रार्थना करने और बिनती करने से नहीं चूकते कि तुम सारे आत्मिक ज्ञान और समझ सहित परमेश्वर की इच्छा की पहचान में परिपूर्ण हो जाओ। (कुलुस्सियों 1:9)

पौलुस जानता था कि किसी भी विश्वासी में परमेश्वर के प्रकाशन की सिद्ध समझ नहीं है। इसलिए, उसने कुलुस्से के विश्वासियों के लिए और अधिक समझ को प्राप्त करने हेतु निरंतर प्रार्थना की। और उनके समान हमें भी पवित्र आत्मा की निरंतर सेवा की जरुरत है ताकि हमारी अपनी समझ बढ़ सके।

अब तक, हम देख चुके हैं कि छुटकारा प्रकाशन की ओर हमें पहुँचाने और प्रकाशन की एक उचित समझ को प्राप्त करने में सहायता करने के द्वारा हमारे ज्ञान को पुनर्स्थापित करता है। इस समय हम यह बात करने के लिए तैयार हैं कि छुटकारा किस प्रकार प्रकाशन के प्रति आज्ञाकारिता को बढ़ाने के द्वारा हमारे ज्ञान को पुनर्स्थापित करता है।

प्रकाशन के प्रति आज्ञाकारिता

इस अध्याय में पहले हमने दो रूपों में आज्ञाकारिता और ज्ञान के बीच के संबंध का वर्णन किया है। पहला, पवित्रशास्त्र में आज्ञाकारिता और ज्ञान के बीच एक आपसी सम्बन्ध है। और दूसरा, बाइबल में ये दो विचार एक-दूसरे से अभिन्न हैं।

और हमारी चर्चा कि किस प्रकार छुटकारा प्रकाशन के प्रति आज्ञाकारिता को बढ़ाता है, इसी तरीके का अनुसरण करेगी। पहला, हम इस वास्तविकता के बारे में बात करेंगे कि छुटकारे और आज्ञाकारिता के बीच एक आपसी रिश्ता है। और दूसरा, हम उन कुछ रूपों के बारे में बात करेंगे जिनमें यह कहा जा सकता है कि बाइबल में ये दो विचार एक-दूसरे से अभिन्न हैं, छुटकारा आज्ञाकारिता है। हम इस वास्तविकता के साथ आरंभ करेंगे कि छुटकारा आज्ञाकारिता की ओर अगुवाई करता है।

पवित्रशास्त्र इसे स्पष्ट करता है कि छुटकारे की एक मुख्य विशेषता वह आज्ञाकारिता है जो यह विश्वासियों के जीवन में उत्पन्न करता है। पवित्र आत्मा की अगुवाई और हमारे अन्दर वास करने वाली सामर्थ से विश्वासी संसार के बाकी लोगों से अलग व्यवहार करते हैं। पतित मनुष्यजाति परमेश्वर से बैर रखती है और उसकी आज्ञा नहीं मान सकती। परन्तु छुटकारा पाई हुई मनुष्यजाति परमेश्वर से प्रेम करती है और उसकी आज्ञा भी मानती है। प्रेरित यूहन्ना ने इस विचार के बारे में बार-बार लिखा है, जैसे कि 1 यूहन्ना 2:3-6। वहां उसके शब्दों को सुनें:

> हम उस की आज्ञाओं को मानेंगे, तो इस से हम जान लेंगे कि हम उसे जान गए हैं। जो कोई यह कहता है, कि मैं उसे जान गया हूं, और उस की आज्ञाओं को नहीं मानता, वह झूठा है; और उस में सत्य नहीं। पर जो कोई उसके वचन पर चले, उस में सचमुच परमेश्वर का प्रेम सिद्ध हुआ है: हमें इसी से मालूम होता है, कि हम उस में हैं। सो कोई यह कहता है, कि मैं उस में बना रहता हूं, उसे चाहिए कि आप भी वैसा ही चले जैसा वह चलता था। **(1 यूहन्ना 2:3-6)**

पवित्रशास्त्र आत्मा के इस कार्य के बारे में प्रायः आत्मा के फल के रूप में बात करता है। उदहारण के तौर पर, मत्ती अध्याय 3 में यूहन्ना बपतिस्मादाता ने कहा कि उसके चेले पश्चाताप करने से फल उत्पन्न करते हैं। और गलातियों 5 अध्याय में पौलुस ने गैरविश्वासियों के जीवन में पाप द्वारा उत्पन्न होने वाली बुरी बातों के विपरीत विश्वासियों के जीवन में पवित्र आत्मा द्वारा उत्पन्न अच्छी बातों को दर्शाया। गलातियों 5:22-23 में पौलुस के शब्दों को सुनें:

> पर आत्मा का फल प्रेम, आनन्द, शान्ति, धीरज, और कृपा, भलाई, विश्वास, नम्रता, और संयम हैं। **(गलातियों 5:22-23)**

उसकी हमारे अन्दर निवास करने वाली और छुटकारा देने वाली उपस्थिति के जरिये पवित्र आत्मा हमारे जीवन में धार्मिकता के फल को उत्पन्न करता है। वह कई रूपों में परमेश्वर की आज्ञा मानने में हमारी अगुवाई करता है ताकि हम नैतिक और आत्मिक गुणों को प्रकट करें।

इस बात को देखने के बाद कि छुटकारा आज्ञाकारिता की ओर हमारी अगुवाई करता है, अब हमें इस वास्तविकता की ओर मुड़ना चाहिए कि ये दोनों विचार एक-दूसरे से अभिन्न हैं- अर्थात् छुटकारा पाने का अर्थ है परमेश्वर की आज्ञा मानना।

पवित्रशास्त्र के कई अनुच्छेद दर्शाते हैं कि छुटकारा और आज्ञाकारिता एक ही बात है। विशिष्ट रूप से, वे परमेश्वर की आज्ञा मानने वालों को ही विश्वासियों के रूप में परिभाषित करने के द्वारा ऐसा करते हैं। कभी-कभी यह इसलिए होता है क्योंकि मसीह की ओर आना आज्ञाकारिता का ही एक कार्य है। इसमें मसीह पर विश्वास करना और हमारे पापों से पश्चाताप जैसी बातें भी शामिल होती हैं। उदाहरण के तौर पर, 1पतरस 1:22-23 में प्रेरित ने यह निर्देश दिया:

> सो जब कि तुम ने भाईचारे की निष्कपट प्रीति के निमित्त सत्य के मानने से अपने मनों को पवित्र किया है, तो तन मन लगा कर एक दूसरे से अधिक प्रेम रखो। क्योंकि तुमने... नया जन्म पाया है। **(1पतरस 1:22-23)**

पतरस ने यहाँ नए जन्म मसीह में आने के रूप में कहा। और उसने इस मसीह में आने के परिवर्तन को सत्य के प्रति आज्ञाकारिता के रूप में पहचाना।

अन्य स्थानों पर छुटकारे को आज्ञाकारिता के साथ जोड़ा जाता है क्योंकि छुटकारा पाए हुए लोग कई भिन्न-भिन्न रूपों में परमेश्वर के प्रति आज्ञाकारी होते हैं। हम उससे प्रेम करते हैं इसलिए उसकी आज्ञाओं को मानते हैं। जैसा कि इब्रानियों 5:9 कहता है:

> (यीशु) अपने सब आज्ञा मानने वालों के लिये सदा काल के उद्धार का कारण हो गया। **(इब्रानियों 5:9)**

इस सन्दर्भ में इब्रानियों का लेखक स्वर्ग में यीशु के निरंतर चल रहे याजकीय कार्य के बारे में कह रहा था, जिसमें वह हमारे लिए अपनी लगातार मध्यस्थता की प्रार्थना के द्वारा हमारे उद्धार को बनाये रखता है। यह कार्य वह उन सबके लिए करता है जिनके जीवन उसके प्रति आज्ञाकारिता से भरे हों, और उन सबके लिए भी पवित्र आत्मा पर विश्वास करते हों एवं जिनके अन्दर पवित्र आत्मा का वास हो।

जब हम छुटकारे और आज्ञाकारिता के बीच संबंध पर ध्यान देते हैं तो यह बात हम अपने मन में रखना चाहते हैं: छुटकारा परमेश्वर के प्रति हमारी आज्ञाकारिता को उत्पन्न करता है, और परमेश्वर के प्रति आज्ञाकारिता परमेश्वर और उसके कार्य करने के तरीकों का ज्ञान उत्पन्न करती है।

एक बार फिर याद करें कि पतन ने हमारे ज्ञान को आंशिक रूप से भ्रष्ट कर दिया था जिससे हमारे लिए परमेश्वर की आज्ञा मानना असंभव हो गया था। उसी प्रकार, छुटकारा हमारी आज्ञाकारिता को पुनर्स्थापित करने के द्वारा पतन के श्राप को उलट देता है, जिसके द्वारा परमेश्वर का ज्ञान उत्पन्न होता है।

इस प्रकाश में कि छुटकारा परमेश्वर के प्रति हमारे ज्ञान को पुनर्स्थापित करता है, इससे हमें चकित नहीं होना चाहिए कि पवित्रशास्त्र प्रायः छुटकारे को परमेश्वर के प्रति ज्ञान के आधार पर सारगर्भित करता है। इस ज्ञान में आंशिक रूप से बौद्धिक ज्ञान होता है, जैसे कि सुसमाचार के सत्यों को जानना। परन्तु इसके अन्दर अनुभवशील एवं संबंधात्मक ज्ञान भी शामिल होता है, जैसे कि हम एक व्यक्ति को जानने के बारे में बात करते हैं। हम इस शिक्षा को भजन 36:10, दानिय्येल 11:32, 2 यूहन्ना 1 इत्यादि स्थानों पर पाते हैं। जैसा कि यीशु ने यूहन्ना 17:3 में प्रार्थना की:

> **अनन्त जीवन यह है, कि वे तुझ अद्वैत सच्चे परमेश्वर को और यीशु मसीह को, जिसे तू ने भेजा है, जाने। (यूहन्ना 17:3)**

अतः, छुटकारे के समय में हमारे स्वभाव के नए हो जाने, हमारी इच्छा की पुनर्स्थापना, और परमेश्वर के प्रति हमारे नए ज्ञान में हमारी जन्मजात अच्छाई पुनर्स्थापित हो जाती है। और हमारे अस्तित्व के इस छुटकारे के द्वारा हम अच्छे कार्यों को करने की योग्यता को प्राप्त करते हैं: अर्थात ऐसी बातों को कहना, सोचना और करना जिन्हें परमेश्वर आशीषित करता है।

निष्कर्ष

इस अध्याय में हमने अच्छाई और अस्तित्व के बीच सम्बन्ध की जांच करने के द्वारा अस्तित्व-संबंधी दृष्टिकोण को जांचना आरंभ किया था। हमने अच्छाई को एतिहासिक रूप में देखा, जिसमें हमने सृष्टि के समय से आरंभ किया और देखा कि अच्छाई परमेश्वर के अस्तित्व में जुडी हुई है और मनुष्यजाति को भी जन्म से ही अच्छे अस्तित्व के साथ रचा गया था। फिर हमने देखा कि पतन ने मनुष्यजाति की जन्मजात अच्छाई को नष्ट कर दिया और हमें नैतिक रूप से एक अच्छा व्यवहार करने के अयोग्य बना दिया। और अंत में, हमने देखा कि छुटकारे के समय में हमारे अस्तित्व की अच्छाई को पुनः स्थापित किया जाता है जब हम मसीह में उद्धार को प्राप्त कर लेते हैं, और जिससे हम नैतिक रूप से अच्छा व्यवहार करने के योग्य हो जाते हैं।

जब हम इस आधुनिक संसार में बाइबल पर आधारित निर्णय लेने का प्रयास करते हैं, तो यह याद रखना महत्वपूर्ण है कि एक सच्ची अच्छाई में परमेश्वर के चरित्र के साथ हमारे चरित्र का मिलान होना आवश्यक है। बुरी खबर यह है कि हम पतित हैं और पाप हमारे अन्दर वास करता है जिससे कि परमेश्वर की

अच्छाई को प्रकट नहीं कर पाते। परन्तु शुभ सन्देश यह है कि जब पवित्र आत्मा हम पर छुटकारे को लागू करता है तो वह हमारे अन्दर वास करता है और हमें नए स्वभाव देता है ताकि हम इस प्रकार से जीवन जी सकें जिसे परमेश्वर अनुमोदित करता है और आशीषित करता है। और यदि हम इन वास्तविकताओं को मन में रखते हैं तो हम हमारे महिमामय परमेश्वर को प्रसन्न करने वाले रूपों में हमारे नैतिक प्रश्नों का उत्तर देने की योग्यता को प्राप्त कर सकेंगे।

चलचित्र, अध्ययन मार्गदर्शिका एवं कई अन्य संसाधनों के लिये, हमारी वेबसाइट thirdmill.org पर जाएँ।